REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 12 | ISSUE - 7 | APRIL - 2023

गीतांजलि श्री की कहानियाँ में स्त्री विमर्श का विहंगावलोकन

डॉ. अरजण वी. नंदाणीया
एम.ए., पीएच.डी.
श्री वी. एम. महेता म्युनि. आर्टस एवं कॉमर्स कॉलेज जामनगर (गुजरात)

हिंदी साहित्य की जानी–मानी कथाकार, उपन्यासकार गीतांजलि श्रीने आधुनिक साहित्य में अपनी एक अलग पहचान बनाई है। पारिवारिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक धरातल पर उन्होंने अपनी लेखनी चलायी है। गीतांजलि श्री का जन्म 8 जून 1957 को उत्तर प्रदेश के मैनपुरी नगर में हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा उत्तर प्रदेश के विभिन्न शहरों में हुई। दिल्ली के श्रीराम लेडी महाविद्यालय से उन्होंने स्नातक और जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय से इतिहास विषय में एम.ए. किया है। महाराजा सयाजीराव गायकवाड़ विश्वविद्यालय वडोदरा से प्रेमचंद और उत्तर भारत के औपनिवेशिक शिक्षित वर्ग इस विषय को लेकर उन्होंने पीएच.डी. की शोधउपाधि प्राप्त की है। कुछ दिनों तक जमिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय में अध्यापन करने के बाद सूरत के सेंटर फॉर सोशल स्टडीज में पोस्ट डॉक्टरल रिसर्च के लिए गई। वहाँ से उन्होंने कहानियाँ लिखना शुरू किया। उनकी पहली कहानी बेल पत्र 1987 में हंस मासिक पत्रिका में प्रकाशित हुई। और बाद में एक के बाद एक कहानियाँ प्रकाशित होती रही। ऐसे ही उनका लिखने का सिलसिला लगातार जारी रहा।

गीतांजलि श्री की साहित्य संपदा – माई, हमारा शहर उस बरस, तिरोहित, रेत समाधि आदि उनके उपन्यास प्रकाशित है। अनुगूँज, वैराग्य आदि कहानी संग्रह है।

माई उपन्यास का कई भाषाओं में अनुवाद हुआ है। उसका अंग्रेजी रूपांतरण क्रॉसवर्ड अवार्ड के लिए भी नामित किया गया था। माई उपन्यास के माध्यम से गीतांजलि श्री ने घर परिवार और समाज में स्त्री की आजादी पर प्रकाश डालने का काम किया है। उपन्यास की प्रमुख पात्र माई पुराने मूल्यों के साथ जीना चाहती है। उसका मानना है कि, घर में स्त्री तभी आदर पाती है जब वह घर के मुल्यों के साथ चलती है और अपना अस्तित्व भूल जाती है। माई इसी सोच के कारण अपने परिवार में सुखी है। आनंदी है। वह परिवार से आजाद होने से इंकार करती है। उसका बेटा सुबोध और बेटी सुनैना माई की सोच बदलने के लिए उसमें परिवतर्न लाने के लिए कोशिष करते हैं। ताकि माई आजाद हो सके। नई जिंदगी जी सके। पर माई बदलने को तैयार नहीं है। अपने पारिवारिक परिवेश में रहना वह पसदं करती है।

लेखिका लिखती है– हमें तो माई में आजाद इच्छाएँ भरनी थी। एक हम ही थे जो उसे खोकला नहीं छोड़ना चाहते थे। वह कमजोर है, कठपुतली है, हमारे सिवा उसका कोई नहीं... हम उसके लिए लड़ते है। और वह पीछे हट जाती है। परंपरागत भारतीय नारी की संस्कारिता एवं घुटन को लेखिका ने विशद किया है। दांपत्य जीवन में डूबी हुई माई अपने दिल का दर्द कभी नहीं बाहर आने देती। परिवार के सदस्यों की फरमाइशें पूरी करते हुए उसका अधिकांश समय रसोई में ही बीत जाता है। पति पत्नी में ना कभी लड़ाई झगड़े हाते है।

ना कभी प्यार की बातें। माई का पति अन्य स्त्रियों के साथ संबंध रखता है। यह मालूम हाते हुए भी माई न कुछ बोलती है न विरोध करती है।

सबकुछ चुप चाप सहना उसकी नियति बन गई है। अपने परिवार को महत्व देने वाली माई अपने पिहर के लोगों से भी संबंध तोड़ देती है। अपने बच्चों के कहने पर भी खुद को नहीं बदलना चाहती है। रसोई घर ही उसकी दुनिया बनी है। अपने दिल का बोझ हल्का करने के लिए वह हमेशा काम में व्यस्त रहना पसदं करती है। अपने बेटी को वह कहती है – तुम से तो नहीं कहते हमारे जैसे बनौ, तुम क्यों जबरदस्ती हमें बदलना चाहते हो? परंपरागत एवं पुरुषसत्ता में दबी पीसी नारी की सोच माई के माध्यम से लेखिका ने विशद की है।

इस उपन्यास में लेखिका ने हिंदू धर्म संस्कृति में स्त्री को कैसे कैसे वृत वैकल्य, प्रथा परंपराओं में जकड़ रखा है इसका वणर्न किया है। इस प्रक्रिया में आज अनेक बदलाव आ रहे हैं। चारदीवारी से मुक्त होकर स्त्री हर क्षेत्र में कार्यरत है, पर आज भी ग्रामीण स्त्री पारंपरिक रीति–रिवाजों को छोडने़ के लिए तैयार नहीं है। हिंदू धर्म में भाई बहन के पवित्र रिश्ते का त्यौहार रक्षाबंधन होता है। करवा चौथ के दिन पति के लिए पत्नी उपवास रखती है परंतु पुरुषों के लिए ऐसा क्यों नहीं है? ऐसा सवाल लेखिका उठाती है। वह कहती है– पत्नियाँ पतियों के लिए व्रत रखती है और पति पत्नियों के लिए क्यों नहीं? उन्है। दुपट्टा क्यों जरूरी है? स्त्री पुरुष के बीच आखिर सेक्स और और प्रेम के संबध में खुली बातचीत क्यों नहीं हो सकती है? मैं कुछ समझी पर खून में ज्वार हो आया। सबके आगे आँखें झुक गई। जो माँ बन सकती है, वह अपवित्र कैसे ?

नारी मुक्ति की बात करने वाली गीतांजलि श्री प्रथा परंपराओं को ताड़े देने से ही स्त्री पुरुष भेदभाव नष्ट हो जाएगा, ऐसा मानने वाली एक बोल्ड लेखिका है।

हमारा शहर उस बरस इस उपन्यास में लेखिका ने देश विभाजन की त्रासदी को अभिव्यक्त किया है। देश विभाजन की त्रासदी का विवेचन करने का साहस केवल पुरुष लेखक की नहीं कर सकते तो उसमें स्त्री भी अच्छी तरह से लिख सकती है, परख सकती है। सांप्रदायिकता की समस्याओं को उजागर करने वाला यह उनका प्रमुख उपन्यास रहा है। बाबरी मस्जिद के प्रसगं को प्रतीकात्मक रूप से इसमें व्यक्त किया गया है। उपन्यास के पात्र शरद, श्रुति और हनीफ रिपोर्टिंग करने वाले पात्र हैं। उनके रिपार्टे महत्वपूर्ण होते है। शरद अपने रिपोर्टिंग में बार–बार बोलता है, रूढीग्रस्त लोगों में भरोसा, शिक्षा और अपनेप न का जज्बा आए, हिंदू में, मुसलमानों में और अन्य धर्मों में भी। उनकी कुंठाओं, उनके आपस के शंकों को इंसानियत के असूलों से सुलझाया जाए।

इस उपन्यास के माध्यम से राष्ट्रीय समस्या को अभिव्यक्ति देने का प्रयास लेखिका ने अच्छी तरह से किया है। सांप्रदायिकता के माध्यम से उसके गंभीर परिणाम का विवेचन उन्होंने किया है। जात धर्म पंथ संप्रंदाय के नाम पर लोगों को भड़काने की मानसिकता और अराजकता को लेखिका ने अभिव्यक्त किया है।

इस उपन्यास के संदर्भ में रोहिणी अग्रवाल लिखती है– गीतांजलि श्री सांप्रदायिकता जैसी समस्या से टकराकर धर्म की अंधी जुनून भरी ताकतों द्वारा बुद्धिजीवियों और शिक्षण संस्थाओं को परिचालित करने की क्षमता के भीतरी कारणों की पड़ताल करने का आह्वान करती है। पारंपारिक ढांचे से अलग चित्रकला शैली में लिखित इस उपन्यास में जीवन को खंड खंड करते हादसों और त्रासदीयों का विवेचन है। और इसके बीच छिपी है मनुष्यता और आशा।

इतिहास की छात्रा रही गीतांजलि श्री इतिहास को सामान्यीकृत करने की कोशिशों का विरोध करती है। मंदिर मस्जिद को लेकर फैली सांप्रदायिकता के बीजों को देखते हुए यह खुलासा होना भी जरूरी मानती है कि, एक कौम में यदि डर और असुरक्षा पैदा होती है तो दूसरी कौंम में ताकत और अहंकार।

उपन्यास में हनीफ और शरद जैसे पात्र सेक्यलूर बुद्धिजीवियों के कट्टर धामिर्क अस्मिता से रिड्यूस होना और हाशिए पर पड़े दूद्द और बाबू पेंटर का क्रमशः केंद्र में आते चलना, इस तथ्य की पुष्टि करता है कि, लोकतंत्र के धर्मनिरपेक्ष रुप को बचाने के लिए आम आदमी को अपनी ओर से सकारात्मक पहल करनी होगी।

रेत समाधि गीतांजलि श्री का यह उपन्यास स्त्री जीवन से संबंधित है। जो तीन भागों में अभिव्यक्त हुआ है। पहला भाग पीठ शिषर्क के नाम से लिखा गया है। इसके केंद्र में आठ दशकों से जिंदगी जीती एक औरत है जो अपने पति के मृत्यु के पश्चात खटिया पकड़ लेती है और पीठ फेर लेती है अपने बच्चों से। सब उसे

समझाने की कोशिश करते है। पर वह किसी की नहीं सुनना चाहती है। स्त्री विमर्श का आत्मावलोकन इस उपन्यास में अच्छे से हुआ है।

लेखिका लिखती है – औरत और सरहद का साथ हो तो कहानी खुदब खुद बन जाती है। स्त्री जीवन हमेशा से अधूरा है और आगे भी अधूरा ही रहेगा। इसकी संपूर्णता इस खुलेपन की मांग करती है जो ढोंगी समाज, देना तो दरू देखना तक नहीं चाहता। पर लेखिका उपन्यास के माध्यम से लिंग भेद पर व्याप्त समाज एवं उसमें व्याप्त संवेदना को खुली चुनौती देती है।

मध्यमवगीर्य लोगों की जीवन पद्धति पर आधारित इस उपन्यास में संयुक्त परिवार, बाजारवाद की मारक भागदौड़ में फंसे अवसाद ग्रस्त युवक युवतियाँ, मानव का हो रहा मशीनीकरण आदि की त्रासदी इसमें चित्रित हुई है। उपन्यास का दूसरा भाग धूप शीषर्क के अंतर्गत बूढ़ी बीमार माँ का चित्रण हुआ है। जो अपने बेटे का घर छोड़ कर बेटी के घर में रहने लगती है। बेटी ने माँ बनकर माँ को बेटी बनाया और उनके माथे पर हाथ फेरा। आ गई यहाँ, अब न जाने दूंगी। दरअसल बहू बेटे को घर के बड़े बुड्ढे बोझ लग रहे हैं। बीवी के आगे बेटे का कुछ नहीं चलता और ऐसे बुढ़ापे में बेटी अपने माँ–बाप का सहारा हो रही है। यह समाज जीवन की वास्तविकता लेखिका ने पाठकों के सामने लाने का प्रयास किया है।

इस धूपवाले भाग में लेखिका ने रोजी के माध्यम से एक ऐसे व्यक्ति रेखा को चित्रित किया है, जो न आदमी है न औरत। ममता की मूर्ति रोजी के माध्यम से बड़ा हृदय विदारक चित्रण करके समाज व्यवस्था में किन्नरों कि त्रासद अस्तित्व लेखिका ने दर्शाया है। इस उपन्यास के संदर्भ में राजीव कुमार मंडल लिखते है। – आदमी और औरत की ही नहीं, मानव और जीव–जंतुओं की सीमा भी लगता है यह उपन्यास। इस में कौए, तितली, कुत्ते इत्यादि बड़े मस्ती से आते जाते हैं, सहानुभूति और मित्रता के संदेश उपन्यास में घोलते हैं। चर अचर की सीमा भी टूटती है यहाँ और कभी कोई दरवाजा, कोई दीवार, कौई सड़क, न केवल वर्तमान बल्कि अपनी आंखों देखकर अतीत की भी गवाही देने लगते हैं।

बालू के रेत को प्रतीक मानकर लेखिका उपन्यास के तीसरे भाग को हद सरहद शीषर्क से रेखांकित करती है। वाघा आ गए तो गाथा ड्रामा और कथा पार्टीशन लेखिका ने इसमें हिंदी साहित्य के जाने–माने साहित्यकारों को याद करते हुए बूढ़ी माँ की जिद चित्रित की है, जो हिंदुस्तान से पाकिस्तान वाघा बॉर्डर से जाना चाहती है। आम लोगों के बीच का प्रेम राष्ट्रवाद के खोखले ड्रामे से अलग है। राष्ट्र की सीमाएं परिस्थिति अनुरूप बनती बिगड़ती रहती है, पर प्रेम की सीमा तो प्रेम के भीतर ही है। वाघा बॉर्डर पर चलने वाले हर शाम के आक्रमिक ड्रामे से अजीज होकर लेखिका लिखती है, लड़ाई है कि खेला, कुछ लोग ऐसे तकते हैं। लेखक भी। मंटो तो सिर नीचा कर लेते हैं, जैसे सो गए या रो दिए।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है। कि, गीतांजलि श्री का साहित्य संसार एक मानवीय साहित्य संसार एक मानवीय संवेदना लेकर समाज के प्रति अपना दायित्व प्रकट करता है। विमर्शों की चकाचौंध में लेखिका ने स्त्री विमर्श, किन्नर विमर्श तथा अन्य कई विमर्शों को भी अपने साहित्य में उतारा है और सीमाओं को लांघते हुए मर रही मानवीय संवेदनाओं को जीवित रखने का प्रयास करते हुए लेखिका अपने साहित्य सृजन से प्रयासरत है। उनकी इस साहित्य सृजना के लिए उसे कई सम्मानों से नवाजा गया है।

सदंर्भ –

1. माई – गीतांजलि श्री
2. हमारा शहर उस बरस – गीतांजलि श्री
3. हसं मासिक पत्रिका – अक्टूबर 2018

डॉ. अरजण वी. नंदाणीया
एम.ए., पीएच.डी.
श्री वी. एम. महेता म्युनि. आर्टस एवं कॉमर्स कॉलेज जामनगर (गुजरात)